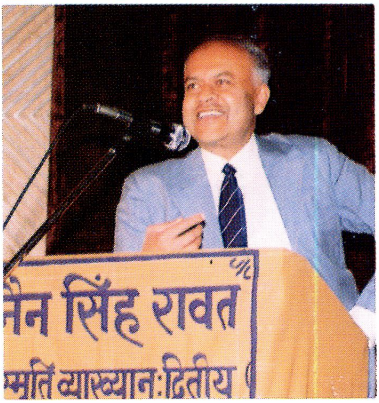

Dr. Jayant Narlikar was born in Kohlapur in 1938. He graduated from Banaras Hindu University. Subsequently he went to the University of Cambridge for higher studies and was awarded the Ph.D Degree in 1963. He was in the faculty in Cambridge from 1963 to 1972. During that period he wrote profusely, both popular books as well as fiction on science and astronomy and was made a member of Fred- hoyle, U.K. until 1972. The same year he joined the Tata Institute as Professor. In 1976 he was conferred a doctorate degree in Science from Cambridge. He is a highly decorated scientist and several awards have been conferred on him for his academic achievements. The distinguished Bhatnagar award was given to him for Physics in 1979, the Venbaper award for astronomy in 1989, the M.P. Birla Award in 1993 and the Kalinga Award in 1996. In 1988 he set up the Inter - University Centre for Astronomy and Astrophysics (IUCCA) at Pune. He joined it as Director in 1989 and continues to hold this position ever since.

मानव कल्याण में खगोल विज्ञान का योगदान

डा० टोलिया, एवं देवियों और सज्जनों,

पण्डित नैन सिंह रावत जैसे अभ्यासक और विद्वान् की स्मृति में आयोजित व्याख्यान माला में भाषण देने का अवसर मुझे मिला इसके लिये मैं गर्व और प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूँ।

नैन सिंह जी एक कुशल सर्वेक्षक थे जिन्होने काठमाडू, मानसरोवर से लेकर ब्रह्मपुत्र नदी के पूरे विस्तार का क्षेत्र नापा था । तिब्बती भाषा की जानकारी हासिल कर उन्होंने 1865 से 1885 तक इस दुर्गभ क्षेत्र में चुनौतियों का सामना कर के महत्वपूर्ण सर्वेक्षण कार्य किया था । रायल जिऑग्राफिक सोसायटी ने उन्हें पेट्रन्स स्वर्ण पदक से विभूषित किया था, जिस पुरस्कार को हासिल करने वाले इस उपखण्ड के वे एकमेव व्यक्ति थे । उनकी पवित्र स्मृति में यह व्याख्यान समर्पित है।

एक खगोल वैज्ञानिक होने के नाते मुझसे अक्सर पूछा जाता है : "आपके इस खगोल विज्ञान के अध्ययन एवं शोध कार्यों का मानव समाज को क्या लाभ मिलता है?" प्रश्नकर्ता शायद यह सोचता है कि दूर्बिनों से करोड़ों-अरबों प्रकाशवर्ष दूर स्थित तारों-नीहारिकाओं-आकाश गंगाओं के निरीक्षणों से जिज्ञासुओं को भले ही वैचारिक खाद्य मिले, पर उनका दैनंदिन सामालिक प्रश्नों से क्या ताल्लुक है ? बल्कि उसकी धारणा यही रहती है कि आकाश के पहलुओं पर माथापच्ची करने वाले पृथ्वी के प्रश्नों से अलिप्त एवं अनभिज्ञ हुआ करते हैं।

मेरे इस भाषण का उद्देश्य इस गलतफहमी को दूर करना है और यह दिखलाना है कि शुद्ध विज्ञान का एक महत्वपूर्ण अंग होने के नाते खगोल विज्ञान की यह दीर्घ परम्परा रही है कि सृष्टि के रहस्यों को खोलते-खोलते जिस ज्ञान की प्राप्ति होती है उसे मानव समाज कल्याण के लिये समर्पित करते जाना। शुद्ध विज्ञान सामान्यतः मानव जिज्ञासा के फलस्वरूप पैदा होता है एवं पनपता है। लेकिन उसकी हासिल की हुई जानकारी अपने प्रभाव को अधिक व्यापक रूप से प्रदर्शित करती है।

इस व्याख्यान में मै उदाहरणों सहित एक श्रृंखला प्रस्तुत करूँगा जिसकी कड़ियाँ इस प्रकार हैं :

1. खगोलीय निरीक्षण
2. निरीक्षणों से निकली जिज्ञासा

3. जिज्ञासा के फलस्वरूप निरीक्षणों में प्रतिकृति की खोज
4. प्रतिकृति की कारण मीमांसा करने वाले वैज्ञानिक नियम की जानकारी
5. वैज्ञानिक नियम पर आधारित उपयोगी तकनीक

होता यह है कि पहली और अंतिम कड़ी के बीच काफी समय गुजर जाता है और लोग भूल जाते हैं कि श्रृंखला की शुरूआत कहाँ हुई थी। इसीलिये खगोल विज्ञान के योगदान के बारे में 'इसका क्या उपयोग है?' ऐसा सवाल पूछा जाता है।

तो मैं आशा करता हूँ कि आगे दिये उदाहरणों से इस प्रश्न का यथोचित उत्तर मिल सकेगा।

नक्षत्र और कृषि का संबंध

पुरातन काल में जब मानव सभ्यता के प्राथमिक चरणों में से गुजर रहा था, तब उसे कृषि की उपयोगिता और उसकी महत्ता समझ में आने लगी। खाद्यान्नों की उपज बड़े पैमाने पर करने के लिये उसे ऋतुचक्र की जानकारी की जरूरत महसूस हुई। बीज कब बोये जाँय, बरसात कब होगी, अनाज के पौधे कब उगेंगे, कटाई कब होगी आदि खेती के कैलेंडर की आवश्यकता थी।

तब तक ऋतुचक्र का संबंध नक्षत्रों से जोड़ा जा चुका था। जैसे-जैसे हम प थ्वी पर सवार होकर सूर्य प्रदक्षिणा में एक वर्ष पूरा करते जाते हैं, हमें सूर्य की पार्श्वभूमि बदलती नजर आती है। यह पार्श्वभूमि है रात में दिखने वाले सितारों की। तारो के गुच्छे अपने विविध आकारों एवं तेजस्विताओं की बदौलत पहचाने जा सकते हैं। ऐसे खगोलीय निरीक्षणों से हमे वर्ष का कैलेंडर मिल जाता है। इसी का फायदा उठाकर किसानों ने खेती की कालसूचि तय की.... जो आज तक चली आ रही है।

अब आप पूछ सकते हैं कि क्या उन खगोल निरीक्षकों ने जो केवल जिज्ञासा प्रेरित हो आकाश दर्शन करते आ रहे थे, जिनकी शताब्दियों से चलती निरीक्षण परम्परा ने मानव को इस वार्षिक काल चक्र से अवगत कराया, क्या उन्होंने उस समय खेती की बात सोची थी? उनकी रूचि तो केवल आकाश के वेध लेने में थी और उन वेधों में कोई प्रतिकृति खोजने की। उन्हें जो प्रतिकृति मिली वहीं आगे चलकर किसानों के लिये फलदायी साबित हुआ।

शुद्ध-विज्ञान की यही परम्परा रही है। इसका विकास जिज्ञासा के माध्यम से होता है – किसी 'फल' की अपेक्षा से नहीं। इसके शोध इधर उधर बिखरे बीजों की तरह होते हैं जिनमें से कुछ फूलते फलते हैं तो कुछ जमीन के भीतर ही विलीन हो जाते हैं।

नक्षत्रों द्वारा दिशादर्शन

आजकल के वाहन GPS (Geo-positioning-system) जायरो स्कोप, रेडार आदि आधुनिक साधनों द्वारा मार्ग की दिशा निश्चित करते हैं । इसके पहले चुंबकीय सुई मार्गदर्शन करती थी। लेकिन उसकी जानकारी भी कुछ शताब्दियों पहले ही हुई थी। उसके पहले स्थल और जल दोनों जगह यात्रियों को दिशादर्शन मिलता था नक्षत्रों के द्वारा। ध्रुवतारा तो उत्तर की ओर उंगली दिखलाता है। पर आकाश के अन्य नक्षत्र, राशियाँ आदि – जिन्हें मानव ने पहचान के लिये सुलभ आकार दिये थे, वर्ष के विभिन्न माहों में दिशादर्शन में सहायता देते थे।

उदाहरण स्वरूप, आप जब किसी बड़े शहर में पता ढूँढते जाते हैं तो आप को पहचान के लिये कुछ इमारतों, बगीचों, तालाबों आदि का सहारा लेना पड़ता है। ठीक ऐसे ही पहचान के सितारे मरूस्थल में यात्री को गुमराह होने से बचाते थे। आज भी इन परिचय के निशानों का इस्तेमाल जन सामान्य कर सकते हैं – जिन्हें आधुनिक उपकरण प्राप्त नहीं हो पाते।

तो यह रहा मेरा दूसरा प्राचीन उदाहरण खगोल विज्ञान के मानव कल्याण के लिये योगदान का था। अब मैं कुछ आधुनिक काल की तरफ बढ़ता हूँ।

केप्लर से आधुनिक दूरसंचार तक----

यह एक लम्बी श्रृंखला है जिसकी शुरूआत हुई आज से लगभग चार सदियों पहले।

टायको ब्राहे एक महान् निरीक्षक थे जिन्होंने युरानीबोर्ग (डेनमार्क) में एक विख्यात वेधशाला स्थापित की थी। उन्होंने ग्रहों एवं तारों के दीर्घकालीन निरीक्षण लिये थे जिनकी जाँच पड़ताल के लिये उन्हें एक सहायक कर्मचारी की जरूरत थी। योहान केप्लर ने यह नौकरी सँभाली। और, केप्लर को टायको के विचित्र स्वभाव का भी सामना करना पड़ा जो अपने सहायक को कभी-कभी अपमानित भी कर देते थे। लेकिन इसके बावजूद केप्लर ने वह पद नहीं छोड़ा क्योंकि वे टायकों के वेधों का महत्व पहचानते थे।

लेकिन केप्लर को इस विकट परिस्थिति से अकस्मात् छुटकारा मिला टायको की मृत्यु से और टायको के उत्तराधिकारियों को फिक्र थी उसकी स्थावर-जंगम जयदाद के बँटवारे की। उसके वेधों के बहुमूल्य कागजात केप्लर ने चुपके से हथिया लिये, क्योंकि उन उत्तराधिकारियों को उनसे कुछ लेना देना नहीं था।

और इन निरीक्षणों की छानबीन में योहान केप्लर ने दो दशकों से अधिक समय बिताया। इस परिश्रम की बदौलत उनका साक्षात्कार हुआ ग्रहों की गति के बिलकुल स्पष्ट नियमों का जिनकी खोज पिछली बीस सदियों से अरिस्टॉटल से लेकर कोपर्निकस तक के खगोल शास्त्री असफल रूप से करते आ रहे थे। ये तीन नियम थे 'केप्लर के ग्रहगति के तीन नियम' जो हमें बड़ी – दीर्घकालीन – समस्या का समाधान दिलाते हैं। समस्या थी :– ग्रह कैसे घूमते हैं?

ग्रह कैसे भ्रमण करते हैं इस प्रश्न का हल केप्लर ने यो प्रस्तुत किया। अंडाकार (Elliptical) कक्षा में, जिसके दो नाभिस्थानों में से एक सूर्य होता है, ग्रह इस प्रकार भ्रमण करता है कि उसे सूर्य से जोड़ने वाली रेखा इस कक्षा का क्षेत्रफल स्थिर वेग से नापती है और विभिन्न ग्रहों की विभिन्न कक्षाओं पर घूमने के आवर्तन काल के बारे में केप्लर का तीसरा नियम यह था कि इस आवर्तन काल का वर्ग और कक्षा के लम्बे अक्ष का घन इनका अनुपात सभी ग्रहों के लिये एक ही होता है।

मैंने केप्लर के नियमों का विस्तार से जिक्र इसलिये किया कि इन्ही नियमें के आधार पर आगे चलकर आइजक न्यूटन अपना गुरूत्वाकर्षण का सिद्धान्त स्थापित कर सके। सामान्य पाठ्य पुस्तकों में इस लोक कथा को प्रधानता दी जाती है कि अपने घर के बगीचे के सेब के पेड़ के नीचे बैठे न्यूटन के सिर पर गिरने वाले फल ने उन्हें गुरूत्वाकर्षण के नियम का साक्षात्कार कराया। रोचक होते हुए भी यह कथा सच नहीं मालूम होती। जरा इसकी भी थोड़ी चर्चा करना मुनासिब होगा।

यह तो सही है कि प्लेग के फैलने के कारण लोग शहर छोड़कर देहातों में गये तो सन् 1666 मे न्यूटन भी केंब्रिज छोड़ अपने वुल्स्थार्प के घर आकर एक साल रहे। आज भी उस घर की – वुलस्थार्प में नर की – एक पर्यटक आकर्षण एवं राष्ट्रीय विरासत के रूप में निगरानी की जाती है और वहाँ सेब के पेड़ थे और अब भी हैं। न्यूटन सेब के पेड़ के नीचे बैठे विचारों में मग्न हों यह तो असंम्भव नहीं। उनके सिर पर सेब के गिरने की सम्भावना कम भले ही हो लेकिन शून्य तो नहीं थी। लेकिन यह असंभव है कि सेब के गिरने के निरीक्षण से न्यूटन इस नतीजे पर पहुँचे कि पृथ्वी सेब को व्यस्त वर्ग नियम (Inverse Square Law) के हिसाब से आकर्षित करे। आज की तकनीक की सहायता से भी हम इस नतीजे पर नहीं पहुँच सकते।

व्यस्त वर्ग नियम के नतीजे पर पहुँचने के लिये न्यूटन को केप्लर के नियमों का आधार मिला था। इसी आधार पर एवं स्वयं शोधित कलनशास्त्र (Calculus) के गणित का इस्तेमाल कर न्यूटन इस नियम पर आ पहुँचे थे और चन्द्रमा के पृथ्वी

की परिक्रमा करने के निरीक्षणों का भी लाभ उठाकर न्यूटन ने गुरूत्वाकर्षण के सिद्धान्त की सच्चाई परखी तो इस मूलभूत सिद्धान्त की उत्पत्ति के लिये खगोलीय निरीक्षण ही पूरी तरह जिम्मेदार थे।

अब हम इस श्रृंखला की अगली कड़ी देखते हैं। आज की अंतरिक्ष तकनीक इस न्यूटन के गुरूत्वाकर्षण के सिद्धान्त पर चलती है। यदि हमें पृथ्वी के चारों ओर घूमने वाले कृत्रिम उपग्रह छोड़ने हों, या चंद्रमा पर मानव अभियान आयोजित करना हो, अथवा मंगल पर पाथफाइंडर यान उतारना हो – इन सभी अंतरिक्ष परियोजनाओं की सफलता गुरूत्वाकर्षण के बल की जानकारी पर निर्भर करती है।

इतिहास का सिंहावलोकन कर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यदि ग्रहों की गति के निरीक्षणों पर आधारित केप्लर के नियम न्यूटन को अवगत न होते तो न्यूटन गुरूत्वाकर्षण के सिद्धांत की खोज नहीं कर पाते और ऐसे सिद्धान्त के अभाव में आज हम अतंरिक्ष तकनीक कामयाब नहीं कर पाते।

अगर हम इन कड़ियों का पारस्परिक सम्बन्ध मान लें तो अब आखिरी कड़ी का नतीजा स्पष्ट होता है। अंतरिक्ष तकनीक ने मानव कल्याण के लिये दूरसंचार सेवा, दूरावलोकन सेवा और अंतरिक्ष में बस्ती बनाने की सम्भावना जैसे तोहफे दिये हैं – वास्तव में उनका मूल खगोल निरीक्षणों में है। जब आप फैक्स या फोन द्वारा संसार के दूसरे कोने में स्थित व्यक्ति से सम्पर्क साधते हैं या टेलिविजन पर स्पेन में होने वाली ऑलम्पिक प्रतियोगिता देखते हैं तो इस बात को न भूलिये कि पौने चार सौ साल पहले केप्लर नामक खगोल शास्त्री के खगोलीय निष्कर्षों के कारण यह सम्भव हो सका है।

सूरज से परमाणु ऊर्जा जनित्र तक

अब एक अन्य पहलू से शुरूआत करें। एक प्रश्न से जो मानव अनादिकाल से पूछता आया और जिसका उत्तर मिला आज से कोई सत्तर वर्ष पहले। प्रश्न था "सूरज क्यों चमकता है?"

सूरज का चमकना उससे निकलने वाली ऊर्जा का द्योतक है यह तो किसी भी अनपढ़ निरीक्षक को भी ज्ञात है। प्राचीन काल में इस शक्ति के कारण सूरज को भगवान माना गया। लेकिन वैज्ञानिक के लिये सूरज एक ऊर्जा श्रोत रहा है जिसकी ऊर्जा का मूल खोजने में उसे इस सदी में सफलता मिली है।

सन् 1920 के आसपास की बात है। सूरज के अंतरंग की रचना के बारे में केंब्रिज विश्वविद्यालय के खगोलशास्त्री आर्थर स्टैनले एडिगंट्न ने एक सिद्धान्त

बनाया। इस सिद्धान्त के अनुसार सूरज एक तप्त गैस का गोला है जिसको अपना आकार टिकाने के लिये अपने ही गुरूत्वाकर्षण का प्रभाव रोकने वाले आंतरिक दबाव निर्मित करना चाहिये। यदि पर्याप्त दबाव न हो तो सूरज का आकुंचन होता रहेगा।

गैस में प्रखर दबावों के लिये ऊँचे तापमान एवं घनत्व की आवश्यकता हैं एडिंगट्न के हिसाब के अनुसार सूरज के केन्द्र भाग में तापमान करोड़ अंश से अधिक होगा। केन्द्र भाग का यह उच्चतम तापमान पृष्ठभाग के लगभग 5500 अंश सेल्सियस तापमान से कोई 2000 गुना है। एडिंगट्न के समीकरणों ने यह सिद्ध किया कि अंदर से बाहर की ओर फिसलते तापमान एवं दबाव की बदौलत सूरज अपना आकार टिकाए है। लेकिन अब उनके सामने प्रश्न था कि ऐसा कौन सा ऊर्जा स्रोत सूरज के भीतर कार्यान्वित है जो केन्द्र में इतनी गर्माहट लाता है।

जे०जे० पेरिन नामक एक वैज्ञानिक के तर्क को आगे बढ़ाते हुए एडिंगट्न ने इस प्रश्न का यह उत्तर सुझाया। सूरज में प्रधान रूप से हाइड्रोजन के परमाणु विभक्तावस्था में मौजूद हैं। यानी, उसमें से न्यूक्लिअस का चक्कर लगाने वाले इलेक्ट्रान अब बाहर हो गये हैं और अलग संचार करते हैं । तो यदि ऐसे चार न्यूक्लिअस एक जगह आकर जुड़ जाएँ तो उनसे हीलियम परमाणु का न्यूक्लिअस बनेगा। परन्तु हीलियम न्यूक्लिअस का वस्तुमान उसे बनाने वाले चारों हाइड्रोजन न्यूक्लियसों के संयुक्त वस्तुमान से कुछ कम है। यह वस्तुमान का घाटा ऊर्जा के रूप में बाहर आता है।

यही वह ऊर्जा स्रोत है जो पाँच अरब वर्षों से सूरज को प्रकाशमान रख रहा है और जो आगे करीब छह अरब वर्ष इसे प्रकाशमान रखेगा।

यह थी एडिंगट्न की कल्पना जो उसने वैज्ञानिकों के सम्मुख प्रस्तुत कीं। किन्तु इस परिकल्पना का विरोध किया परमाणु विशारदों ने। उनकी आपत्ति यह थी कि घनात्मक विद्युत्भार के चार कण (यानी हाइड्रोजन न्यूक्लिअस) भला जुड़ कैसे पाएँगे, जब कूलंब का प्रत्याकर्षण बल उन्हें दूर फेंकेगा? इस बल पर काबू पाने के लिये इन कणों के पास गतिजन्य ऊर्जा होनी चाहिये जिसके आधार पर ये एक दूसरे पर टकरा सकें। उनके अनुमान से एक करोड़ जैसा तापमान भी उतनी गतिजन्य ऊर्जा ऐसे कणों को नहीं दे पाएगा।

सन् 1926 में अपनी सितारों की रचना पर लिखी पाठ्य पुस्तक में एडिंगट्न महोदय ने इन वैज्ञानिकों पर ऐसी टिप्पणी की :

"हम उन टीकाकारों से विवाद नहीं करना चाहते जो ऐसा कहते हैं कि (इस क्रिया के लिये) तारों का तापमान पर्याप्त नहीं हैं – हम उनसे कहेंगे कि आप इससे भी तप्त जगह जाँय।"

शायद यह 'भाड़ में जाँय' कहने का खगोल शास्त्रीय तरीका हो सकता है!

लेकिन एक दशक उपरांत एडिगट्न का तर्क सही निकला। परमाणु वैज्ञानिकों ने यह स्वीकार किया कि चार हाइड्रोजन परमाणुओं के 'फ्यूजन' से ऊर्जा सहित हीलियम का परमाणु बन सकेगा। तब तक न्यूक्लीय विज्ञान यहाँ में प्रगति कर चुका था जिसमें न्यूक्लियस के भीतर कार्यरत आकर्षण बल की जानकारी वैज्ञानिकों को मिल चुकी थी। यह बल बहुत संकुचित सीमा के भीतर अपना प्रभाव दिखाता है, लेकिन जब यह प्रभावशाली रहता है तब वह विद्युतचुंबकीय बल पर हावी रहता है। इसलिये हाइड्रोजन के न्यूक्लियस जब एक दूसरे के निकट आते हैं तो न्यूक्लिस बल उन्हे 'चिपका' सकता है और इस तरह न्यूक्लीय फ्यूजन क्रिया को अवसर मिलता है । एडिंगट्न के द्वारा हिसाब लगाकर बताये गये केन्द्रीय तापमान में ऐसी क्रिया द्वारा हायड्रोजन से हीलियम बनाना संभव हो जाता है। यहीं सूरज के तेज का रहस्य है।

लेकिन आप पूछेंगे कि इसका मानव के दैनिक जीवन से क्या सम्बन्ध ? तो अब इस श्रृंखला की अगली कड़ी देखें।

सूरज की ऊर्जा जिस फ्यूजन क्रिया द्वारा होती है, क्या उसकी एक आवृत्ति हम पृथ्वी की प्रयोगशाला में करा सकते हैं? यदि यह संभव हो सके तो हमारे ऊर्जा के विकट प्रश्न पर एक नया हल मिल सकेगा। समुद्री जल में कुछ थोड़े पैमाने पर 'भारी जल' भी होता है जिसकी रासायनिक रचना में सामान्य हाइड्रोजन की जगह भारी हाइड्रोजन समाविष्ट रहता है। भारी हाइड्रोजन को 'डयूटीरियम' नाम से जाना जाता है और इसके न्यूक्लियस में प्रोटोन के अलावा एक न्यूट्रान भी रहता है। डयूटीरियम के दो न्यूक्लियस जुड़ जाने से हीलियम का न्यूक्लियस बनेगा और ऊर्जा भी निकलेगी।

हिसाब बताता है कि एक किलोग्राम हाइड्रोजन के फ्यूजन से इतनी ऊर्जा निकलेगी जिसके बल पर एक मेगावाट का जनरेटर बीस साल चल सकेगा। अब सोचिये कि यदि यह तकनीक मानव को साध्य हो तो उससे ऊर्जा समस्या का कितना व्यापक सामधान मिल सकेगा।

अक्सर तकनीक की शुरूआत प्रयोगशाला में होती है। यहाँ प्रयोगशाला है सूरज ! खगोल विज्ञान ने अब सप्रमाण सिद्ध किया है कि न्यूनलीय फ्यूजन

क्रिया संयमित रूप से कार्यान्वित कर ऊर्जा निर्माण हो सकता है। मानव ने असयमित रूप से यह कर दिखाया है – हाइड्रोजन बम इसी क्रिया के विस्फोटक प्रमाण हैं।

आज वैज्ञानिक इस चुनौती का जबाब खोजने में जुटे हैं कि जो सूरज में संभव है वह पृथ्वी पर कर दिखाएँ। सूरज में प्रखर गुरूत्वाकर्षण की बदौलत जो दबाव पैदा होते हैं वे क्रिया पर नियंत्रण रखते हैं। वैसे दबाव तीव्र चुम्बकीय क्षेत्रों के द्वारा पैदा करने में वैज्ञानिक प्रयत्नशील हैं। लेकिन इस कठिन चुनौती का सामना करने की प्रेरणा आई है खगोल विज्ञान से।

संगणकों के युग में

आज के जमाने में संगणकों का 'साफ्टवेअर' लिखना एक महत्वपूर्ण कला मानी जाती है जिसका प्रयोग मानव जीवन के कई विभिन्न भागों में होता है। खगोल विज्ञान संगणकों के प्रयोग पर बहुत जोर देता आया है और दूरस्थ आकाशगंगाओं, नीहारिकाओं, तारों एवं अन्य ऊर्जा श्रोतों के दूर्बीनों निरीक्षणों की जाँच एवं विश्लेषण के लिये संगणक काम आते है। उसी प्रकार खगोल भौतिकी के प्रश्न गणित के माध्यम से हल करने के लिये कम्प्यूटरों का इस्तेमाल होता है।

इस पार्श्वभूमि पर पिछले दस-पन्द्रह वर्षों से संगणकों का साफ्टवेअर खगोलीय प्रश्नों को हल करने के लिये काफी लिखा जा रहा है। और इसे लिखने वाले खगोलशास्त्री आगे चलकर इसका इस्तेमाल समाज के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने वाली कई विधायक तकनीकी परियोजनाओं के लिये कर चुके हैं। यह ऐसे उदाहरण हैं जिनमें शुद्ध वैज्ञानिक शोध के लिये किया गया कार्य मानव कल्याण में लाभदायी सिद्ध हो चुका है।

इसलिये जब कोई आलोचक शुद्ध विज्ञान और उसमें भी खगोल-विज्ञान की उपयोगिता का प्रश्न उठाता है तो मैं ऐसे आधुनिक और ऐतिहासिक उदाहरण देकर उसकी शंकाओं का सामाधान करने का यत्न करता हूँ। हमारे पुराने पूर्वजों ने ज्योतिर्विज्ञान की महत्ता जानी थी और कहा था:

वेदस्य निर्मलं चक्षु :ज्योतिः शास्त्रामनुत्तमम्।

यानि ज्ञान के सर्वाधिक निर्मल चक्षु के रूप में हमे खगोल विज्ञान को देखना चाहिये।

इसी उदाहरण के साथ मैं नैन सिंह रावत जी की पुण्यस्मृति को अभिवादन कर इस व्याख्यान को पूरा करता हूँ।